

मैथिलीशरण गुप्त की कविता 'गुरु तेगबहादुर' का कश्मीरी अनुवाद

अग्निशेखर

सुपरिचित कश्मीरी कवि कुमार अशोक सर्राफ 'घायल' ने मुझे दिल्ली से फोन पर जब यह सूचना दी कि उन्होंने हिंदी के यशस्वी कवि मैथिलीशरण गुप्त की ऐतिहासिक कविता 'गुरु तेगबहादुर' का कश्मीरी अनुवाद किया है, मैंने उन्हें बधाई दी। फोन पर ही उनसे कुछेक चुनिंदा पदों का कश्मीरी रूपांतर सुनकर मैं दंग रह गया। मूल पाठ के इतना निकट कश्मीरी रूपांतरण, मुझे अतिरिक्त खुशी हुई। यह उनके तीन वर्ष के परिश्रम का सुफल है। ऐसा उन्होंने बताया।

"मैंने इस अनुवाद को एक निर्वासित कश्मीरी कवि के नाते भी एक ऐतिहासिक कृतज्ञता के साथ किया है। आप जानते हैं हम लोगों पर अलग से कितना ऋण है श्री गुरु तेगबहादुर का! मेरा अनुवाद सफल कहा जा सकता है या नहीं, यह मैं सुधी पाठकों पर छोड़ता हूँ..।" कुमार अशोक घायल की आवाज श्रद्धा विगलित थी।

मैंने उनसे पूछा, "आपको दददा (मैथिलीशरण गुप्त) की इस कविता का खयाल कैसे आया और यह रचना मिली कहाँ आपको?" "निर्वासन के कुछ ही बरस बाद जब हम कश्मीरी पंडित हजारों की संख्या में एक कृतज्ञता-यात्रा के रूप में आनंदपुर साहब गये थे, उससे पहले दिल्ली में गुरुद्वारा शीषगंज में भी कृतज्ञता अर्पित की थी हमने। तभी से कुछ लिखने की बात थी मन में। फिर एक दिन यह हिंदी कविता हाथ लगी। मैथिलीशरण गुप्त की कविता पढ़कर मैं अभिभूत हो गया और बस... ठान ली इसका कश्मीरी में अनुवाद करने की।"

मेरे मन में कई प्रश्न उठे। हम कश्मीरियों में भी कितने लोगों को पता है कि मैथिलीशरण गुप्त ने अपने समय के अप्रतिम इतिहास-पुरुष श्री गुरु तेगबहादुर के धार्मिक आस्था की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए तथा औरंगजेबी फासीवाद के खिलाफ किए विलक्षण आत्म-बलिदान को लेकर काव्य रचा है।

कितने लोगों को पता होगा कि मैथिलीशरण गुप्त से भी पहले अट्ठारहवीं शताब्दी में रीतिकाल के आरंभिक दिनों में ब्रजभाषा के एक महत्त्वपूर्ण कवि सेनापति ने गुरु तेगबहादुर के अद्वितीय प्राणोत्सर्ग को लेकर लिखा था-

"सगल सिसटि पै ढापी चादर

करम धरम की जिनि पति राखी

अटल करी कलजुग में साखी।।

सगल खिसटि जा का जस भयो।

जिह ते सरन धर्म अंचयो

तीन लोक में जै जै जै भई.

सतिगुरि पैज राखि हम लई।

तिलक जनेऊ अरि धरमसाला

अटल करी गुरु भए दिआला ॥"

इसी तरह कितने लोगों को पता होगा कि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने बंदा वीर वैरागी पर 'बंदी वीर' शीर्षक से एक मार्मिक कविता लिखी है जो इस तरह आरंभ होती है :

"पंच नदी तीरे वेणी

पकैया शिरे

देखिते देखिते गुरुर मंत्रे

जागिया उठिछे सिख

निर्मम निर्भीक..।"

संभवतः मैथिलीशरण गुप्त की इस रचना 'गुरु तेगबहादुर' की पर्याप्त चर्चा और जानकारी के अभाव के कारण ही डॉ. आशानन्द वोहरा 'गुरु तेगबहादुर जी जीवन और व्यक्तित्व' नामक आलेख में कहते हैं कि गुरु तेगबहादुर जी के जीवन और व्यक्तित्व पर हिंदी में स्वतंत्र ऐतिहासिक महाकाव्य अभी तक नहीं लिखा गया है। (गुरु तेगबहादुर : जीवन, दर्शन और विवेचना, सं. प्रेम प्रकाश सिंह, पृ. 1)। मैथिलीशरण गुप्त की यह रचना भले ही महाकाव्य न हो, लेकिन हिंदी में उन पर किसी ने कुछ न लिखा हो. ऐसा नहीं कहा जा सकता।

कुछ दिनों के बाद कवि कुमार अशोक 'घायल' के प्रकाशक उत्पल प्रब्लिकेशंस के मालिक मित्र उत्पल कौल ने मैथिलीशरण गुप्त के मूल हिंदी काव्य सहित कश्मीरी अनुवाद की पांडुलिपि मेरे पास भूमिका लिखने के लिए साग्रह भेजी। मैं ना नहीं कर सका। लोभ भी संवरण न कर पाया।

यूनिवर्सिटी के दिनों पड़ी 'गुरु तेगबहादुर' कविता आज बरसों बाद मेरे हाथ में थी। मैंने इसे पढ़ना क्या शुरू किया कि अंत तक पढ़ता ही चला गया

"तेगबहादुर, हाँ, वे ही थे गुरु पदवी के पात्र, समर्थ।

तेगबहादुर, हाँ, वे ही थे

गुरु पदवी थी जिनक अर्थ

यह लंबी प्रबंधात्मक कविता गुरु तेगबहादुर के बलिदान की गाथा तो है ही, साथ ही यह उत्पीड़ित, शोषित और पद-दलित जनता के साथ कवि की पक्षधरता का भी परिचायक है।

राजनीतिक दमन, संकीर्ण साम्प्रदायिक भावना, अत्याचार और बलात् धर्मांतरण के विरुद्ध गुरु तेगबहादुर का तत्कालीन शक्तिशाली मुगलिया सलतनत के विरुद्ध डटकर खड़े होना मानवधर्म, सह-अस्तित्व और सौहार्द के उदात्त धर्मनिरपेक्ष।

जीवन-मूल्यों की रक्षा में जान की बाजी लगाने की स्वर्णिम गाथा है। लोकमंगल की भावना से प्रेरित उनका जीवन-आदर्श है उनका बलिदान।

यह विडंबना ही है कि स्वतंत्रता के बाद हमने लोकांत्रिक भारत के सच्चे धर्मनिरपेक्ष महानायक के रूप में गुरु तेगबहादुर को ऐतिहासिक नायकत्व नहीं दिया। उल्टे में हम मैकालिफ, टूप, कनिंघम और पिंकाट जैसे विदेशी विद्वानों के पूर्वाग्रह जनित लेखन को महत्त्व देते रहे। परदुःख-कातर संत कवि गुरुतेग बहादुर को लेकर क्या क्या नहीं लिखा गया।

॥ कवि मैथिलीशरण गुप्त॥

महावीरप्रसाद द्विवेदी के शिष्य, मैथिलीशरण गुप्त हिंदी में राष्ट्रीय चेतना, गौरवशाली भारतीय अतीत के साथ ही साथ सांस्कृतिक, सामाजिक तथा भाषाई संवेदना और सौहार्द के प्रतिनिधि कवि हैं। गांधीवादी दर्शन से प्रेरित और प्रभावित मैथिलीशरण गुप्त स्वाधीनता आंदोलन में भी सक्रिय रहे।

इसलिए उनके काव्य-संसार में हम उनकी तत्कालीन भारतीय समाज की चिंताओं से उबरने की गंभीर छटपटाहट देखते हैं। वे इतिहास, पुराण, मिथक से परंपरागत सौहार्द, नैतिकता, मानवीय संबंधों की पवित्रता और समानता की बहाली हेतु समाज में ऐसे पारंपरिक प्रतीकों, आदर्शों को केंद्रीयता देते हुए मिलते हैं। 'भारत भारती', 'पंचवटी', 'यशोधरा', 'साकेत', 'मैघनाद वध', 'नहुष' जैसी उनकी अनेक मौलिक काव्य कृतियों तथा उनके द्वारा अनूदित रचनाओं को इसी दृष्टि से देखा जाता है। उनकी कविता 'गुरु तेगबहादुर' की रचना-प्रक्रिया के पीछे भी यही दृष्टि है।

॥ 'गुरु तेगबहादुर' का आख्यान॥

डॉ. रमेश कुंतल मेघ के अनुसार, "इतिहास की यह भी 'विडंबना' (पैराडाक्स) है कि गुरु तेगबहादुर द्वारा गुरुगद्दी पर बैठने (1665) के कुछ साल पहले वह (औरंगजेब) अपने भाई दाराशिकोह का सर कटवा कर वैसा ही कत्ल करवा चुका था; अपने भाइयों और पिता को (गद्दी के उत्तराधिकार के संदर्भ में) कैद में डाल चुका था। इसके अलावा उसने सतनामियों की साधु जमात पर तेग चलाई और सरमद जैसे सूफी दरवेश को भी कत्ल कर दिया।"

"कट्टरता की दशाओं में गैर-इस्लामी के बागी होने पर दो विकल्प थे-या तो वह इस्लाम कबूल करे अथवा मौत। गुरु तेगबहादुर की शहादत (भी) इसकी मिसाल है।" (गुरु तेगबहादुर : जीवन, दर्शन और विवेचन, सं. प्रेम प्रकाश सिंह, पृ. 127)

स्वभावगत कट्टरता, क्रूरता और करामातों में विश्वास के कारण इतिहास में औरंगजेब एक शक्तिशाली शासक के साथ ही एक दयनीय पात्र के रूप में भी जाना जाता है।

कार्ल मार्क्स उसे 'नोट्स ऑन इंडियन हिस्ट्री' (मास्को, पृ. 5153) में तो 'गधा' और 'बैल' तक कह देते हैं। डॉ. रमेश कुंतल मेघ अपने ऊपर्युक्त आलेख (पृ. 128) में लिखते हैं, 'कार्ल मार्क्स ने सन् 1666 वर्ष की डायरी में नोट किया है कि 'अपने खुदगर्ज स्वभाव के बावजूद औरंगजेब मराठों के साथ शुरू से ही एक 'गधे' की तरह तथा बाद में (1680)... 'एक बैल' की तरह व्यवहार करता चला।'

अर्थात् यह औरंगजेब की पाश्विक प्रवृत्ति है जिसके धर्मांध रूप को विवेच्य कविता में गुरु तेगबहादुर का आध्यात्मिक संत व्यक्तित्व चुनौती देता है।

मैथिलीशरण गुप्त की कविता में 'औरंगजेब' और 'गुरु तेगबहादुर' हमारे लिए रूपक में बदलते हैं।

इस तरह आज भी गुरु तेगबहादुर का जीवनादर्श, समकालीन भारतीय समाज जीवन में सौहार्द की स्थायी प्रतिष्ठा की दृष्टि से, और अधिक प्रासंगिक हो उठता है।

मैथिलीशरण गुप्त की यह कविता।।

।। इस कविता के एक सौ उन्नीस पद हैं। सरस, सहज और करुण शब्द प्रवाह के साथ गुरु तेगबहादुर के जीवन, दर्शन और अप्रतिम बलिदान का ओजपूर्ण प्रतिपादन! 'गुरु तेगबहादुर' कविता सिख-गुरु परंपरा में नवमें गुरु तेगबहादुर के स्वभाव, वैराग्य, समभाव का निरूपण करती है।

ऐतिहासिक और राजनीतिक घटनाक्रम में उनका बलिदान प्रसिद्ध हिंदी साहित्यकार डॉ. महीप सिंह के अनुसार (गुरु तेगबहादुर जी के बलिदान का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, पूर्वोक्त संपादित पुस्तक, पृ. 44) एक वृहत्तर विद्रोह की भूमिका का काम करता है और विद्रोह के बीज 'अस्वीकार' में से अंकुरित होते हैं।

अन्याय का यह 'अस्वीकार' अन्याय के प्रति विरक्ति या पलायन की स्थिति के बदले उससे सीधे जूझने में दिखता है। कविता 'गुरु तेगबहादुर' में कवि मैथिलीशरण गुप्त बताते चलते हैं कि औरंगजेब की सुविचारित धार्मिक असहिष्णुता की हिंसक नीति के सताए कश्मीरी पंडितों के फरियादी जत्थे की हृदयविदारक गुहार सुनकर गुरु तेगबहादुर कैसे द्रवित हुए। कैसे जीवन के मोह को त्याग उन्होंने मृत्यु का सहर्ष वरण किया, उदात्त मानवीय जीवन मूल्यों की रक्षा करते किस तरह आसुरी अत्याचार 'सहे और अपने प्राणों का उत्सर्ग किया।

इतिहासकार जदुनाथ सरकार (हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, पृ. 313) के शब्दों में उन्होंने (गुरु तेगबहादुर ने) कश्मीर के हिंदुओं को इस्लाम में जबरदस्ती दीक्षित करने का खुला विरोध किया था। दिल्ली बुलाए जाने

पर उन्हें इस्लाम कबूल करने के लिए पाँच दिन तक यातनाएँ देने के बाद उनका शीश धड़ से अलग कर दिया गया। इस स्तब्धकारी घटना पर गुरु गोबिंद सिंह को ओजपूर्ण

काव्य-अभिव्यक्ति रोंगटे खड़े करने वाली है-

प्रभुपुर कियो पयान।

"ठीकरि फोरि दिलीस सिरि,

तेगबहादुर-सी क्रिया करी

न किन हूँ आनि ॥

तेयंबहादुर के चलत भयो

जगत है है है सभ जग भयो

जै जै जै सुरलोक ॥

(दशम ग्रंथ, पृ. 54)

अक्सर गुरु तेगबहादुर के बलिदान के संदर्भ में उद्धृत किया जाता है कि उन्होंने सीस दिया पर-सी न उचरी। हमें उनसे दो सौ बरस पूर्व गुरु नानक देव की वो बाणी याद करनी चाहिए जिससे सिख गुरुओं की बलिदानी मानसिकता बनी मालूम होती है :

"जो तउ प्रेम खेलन का चाउ

सिरधर तली गली मेरी आउ

त मारगि पैर धरीजै

सिर दीजै काणि न कीजै"

अर्थात् यह कठिन मार्ग है। मेरी इस गली में आना चाहो तो सिर हथेली पर रखकर आना होगा। सिर देना होगा, पर उफ न करनी होगी।

देखा जाए तो मैथिलीशरण गुप्त इस कविता में कामरूप (असम) बंगाल, उड़ीसा, बिहार, उत्तर प्रदेश, पंजाब और कश्मीर आदि की तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में गुरु तेगबहादुर के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, उनके जीवन और व्यक्तित्व, उनकी बाणी की तत्त्व-मीमांसा और कुलमिलाकर उनकी सक्रियता, उनकी दसियों प्रचार-यात्राएँ, ऐतिहासिक कर्तारपुर की लड़ाई में उनकी शानदार भागीदारी पर अपने पिता हरगोबिंद जी से मिली प्रशंसा आदि की पृष्ठभूमि में कथ्य को विशद और बहुरेखीय बना सकते थे।

कविता में एक स्थान पर संकेत भर मिलता भी है-"शासन था औरंगजेब का चारों ओर मचा था त्रास।" लेकिन कवि इस अवसर को शायद जानबूझकर हाथ से जाने देते हैं। गुरु तेगबहादुर जी के जीवन-चरित्र से संबंधित जरूरी ऐतिहासिक दस्तावेजों के अध्ययन से एक बड़े परिप्रेक्ष्य का निर्माण हो सकता था। यह ऐतिहासिक कविता सच में एक बड़ी रचना बनती। लेकिन कवि एक विस्तृत फलक को दुःख-कातर भाव से लिखकर इसे, मेरे मतानुसार, "मैथिलीशरण गुप्त उतनी बड़ी रचना नहीं बना पाए हैं। इसके बावजूद इस कविता का अपना और ऐतिहासिक महत्व है, साहित्यिक तो है ही।"

यह कविता अपने कथ्य में मात्र इतनी सी बात न कहती कि समय के सताए कश्मीरी पंडित आनंदपुर चले आए। गुरु तेगबहादुर से फरियाद की। उन पर ढाए जा रहे जुल्मो-सितम से चिंतित गुरु ने उन्हें बादशाह (औरंगजेब) को जाकर चिट्ठी लिखने को कहा कि यदि एक गुरु तेगबहादुर को मुसलमान बना सकते हो तो सब कश्मीरी हिंदू इस्लाम कबूल करेंगे।

यहाँ से कविता आगे सरपट दौड़ती हुई गुरु के साथ दिल्ली आए उनके शिष्य 'सचिव, विप्र, बुधवर मति दास' का उल्लेख करते हुए वध स्थल की ओर बढ़ती है जहाँ पर धर्मांतरण के प्रलोभनों, छलों, धमकियों तथा यातनाओं को अस्वीकार करने पर गुरु तेगबहादुर का शिरच्छेद कर दिया जाता है।

वहाँ पर गुरु तेगबहादुर के एक शिष्य पिता सहित नाटकीय ढंग से प्रकट होते हैं। पिता अपने सिर को धड़ से अलग कर बेटे के लिए यह संभव करता है कि वह गुरु के शव को ले भागे और उसकी जगह उसका घड रखे। यह काल्पनिक मोड़ सारी कथा के प्रभाव को कम कर देता है।

उस दौर में सिर्फ कश्मीरी पंडितों पर ही धार्मिक उत्पीड़न नहीं हो रहा था। औरंगजेब ने भारत को 'दारुल हरब' से 'दारुल इस्लाम' बनाने हेतु पहले उज्जैन पर तलवार चलाई, फिर वाराणसी पर, फिर हरिद्वार और कुरुक्षेत्र पर। सबने कहा कि यदि कश्मीरी पंडित इस्लाम कबूल करेंगे तो पूरे हिन्दुस्तान के हिंदू धर्मांतरण करेंगे।

औरंगजेब ने इफ्तिखार खान को इस काम के लिए 1671 ई. में चौदहवें गवर्नर के रूप में कश्मीर भेजा। उसने कश्मीरी हिंदुओं पर बेइंतहा अत्याचार किए। ऐसे में मटन (मार्तण्ड) अनंतनाग के पं. कृपाराम दत्त के नेतृत्व में पाँच सौ कश्मीरी पंडितों का फरियादी जत्था चक्क-नानकी (आनंदपुर) गुरु तेगबहादुर के पास पहुँचा। उसके साथ उसका भाई सन्मुख दत्त भी था।

कवि सेवा सिंह ने 'साहिब विलास' में इस घटना का एक सुंदर और सघन बखान इन शब्दों में किया है :

"दुखी विप्र चल के आए पुरी आनंद

बांह असाडी पकडिए, गुरु हरगोबिंद के चंद तेगबहादुर जगत्गुरु, सुन इम हाहाकार

रछक गौ गरीब का, कलजुग का अवतार हाथ जोरि कहियो किरपाराम

दत्तज ब्राह्मण मटनग्राम

हमरो बल अब रहियो नहि काई

हे गुरु तेगबहादुर राई!"

मैथिलीशरण गुप्त इस प्रसंग को इस तरह रचते हैं :

"देव यथा दैत्यों के भय से

आए थे दधीचि के द्वार।

कुछ कश्मीरी ब्राह्मण आकर

गुरु से करने लगे गुहार।।

डूब न जाए हाय! हे गुरुवर

निज नंदनवन-सा कश्मीर।

बरसाते हैं नयन-काल-घन

धेनु-रुधिर-धारा का नीर।।"

और कुमार अशोक 'घायल' इसे कश्मीरी में ऐसे रखते हैं:

"राख्यस बयि निश त्रहरेमित्य

आमित्य रेप्य दरवाजस प्येठ।

कैह काँशिर्य ब्रेहमन व्येसरेमित्य

द्वख विलजार आस्य आमित्य हेथ ॥

युथ न साँ जायि गर्छधि ही गुरुवर

लूबवुन शूबवुन सोन कश्मीर।

खंहरनि खंतिमित्य तिख्य मोकल सख्त

स्योद सादन यिनै दिन हटि चीर।।"

महत्प्रयोजन की सिद्धि के लिए गुरु तेगबहादुर के प्राणोत्सर्ग की विक्षोभकारी घटना को मैथिलीशरण गुप्त अनासक्त भाव के साथ इन शब्दों में निरूपण करते हैं:

"ध्यानमग्न गुरु छोड़ चुके थे

मानो पहले ही निजी देह।

सिर कट गया और ऊपर को

बरसा उष्ण रुधिर का मेह।।"

कुमार अशोक 'घायल' ने इसे कश्मीरी में इस तरह पिरोया है:

"गुरु श्री अमि ब्रॉठ्य ऑस्य जन

त्यौंगिथ शरीर तें दुनियाँही श्रेह।

म्वख गर्दनिगंड सोशत सोशत प्येव तें रूदन वाहरोव सोशत सोशत श्रेह।।"

गुरु तेगबहादुर की अंतिम वेला में उनके ब्रह्मलीन योगी रूप का जो कारुणिक वर्णन मैथिलीशरण गुप्त ने किया है वैसा ही वर्णन गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी 'बंदी वीर' कविता में बंदा वीर बैरागी के बर्बर अंत के समय उनकी भावातीत अवस्था का किया है। बोटी बोटी कटने पर भी एक कातर शब्द का उच्चार न करना उनके इसी योगीरूप का परिचायक है। देखें:

"सभा होलो निस्तब्ध

बंदार देहो छिरिलो घातक

सरांशी करिया दग्ध

स्थिर होए वीर मरिल,

ना करी

एकटी कातर शब्द

दर्शन जन मुदिल नयन

सभा होलो निस्तब्ध"

अंत में कवि कुमार अशोक सर्राफ 'घायल' को मैं बधाई देता हूँ कि उन्होंने मैथिलीशरण गुप्त की कविता गुरु तेगबहादुर के अप्रतिम बलिदान पर लिखे काव्य का पूरी निष्ठा और सामर्थ्य के साथ का सार्थक रूपांतरण किया है। अनुवाद जितना सहज और संप्रेषणीय होता है उतना ही सफल भी होता है। बर्तोल्ट ब्रेष्ट के अनुसार कुछ लोग अनुवाद करते हुए कुछ ज्यादा ही अनुवाद करते हैं जो कुमार अशोक 'घायल' ने नहीं किया है। उनके अनुवाद देशज महक हैं।